स्वपथगामी
जुलाई 2004
अंक - 2

केरल यात्रा से स्वपथगामियों को क्या प्रेरणा मिली?

walking out...

''दुनिया में विविध प्रकार के काम हो रहे हैं, यदि हम उन्हें ठीक तरह से देखते हैं और स्वयं खोज करते हैं, तो विकल्पों की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। केरल यात्रा के अनुभव इन्हीं सम्भावनाओं को खोजने के लिए प्रेरित करते हैं।''
– पंकज सुलोडिया (दिल्ली)

''कनवू, गुरुकुला, कुम्भम् म्यूरल्स एवं ऑलेमेंट्स स्वपथगामियों के सपनों का साकार रूप है, जहाँ आज की व्यवस्था और बाजार से हटकर अपने रास्ते खुद तय करने के अवसर हैं। इन अनुभवों के बाद मुझे प्रकृति और जीवन का गहरा नाता समझ में आया।''
– सन्दीप चव्हाण (नाशिक)

''यहाँ व्यक्ति, प्रकृति और संस्कृति की विराट समग्रता से मैं बहुत प्रेरित हुई। सीखना और जीना उन सबके लिए सहज प्रक्रिया है। यात्रा के दौरान इन नए अवसरों से जानकर, समझकर और अनुभव करके मुझे बहुत हिम्मत मिली और अपनी राह पर चलने के लिए बहुत ऊर्जा और सृजनात्मक दिशाएँ मिली हैं।''
– सुजाता बाबर (नाशिक)

''कनवू के लोग अपनी स्थानीय बोली व संस्कृति के प्रति समर्पण और बेहद लगाव रखते हैं। ये अपनी परम्पराओं को जीवित रखते हुए पीढ़ी दर पीढ़ी सीखते हैं। उनका स्थानीयता से प्रेम वैश्विक व्यवस्था के प्रतिरोध और विविधतापूर्ण निर्माण के लिए प्रेरित करता है।''
– रामावतार सिंह (अजमेर)

''यात्रा के दौरान मिले लोगों और स्थानों की यह विशेष बात रही कि उन्होंने अपनी ताकत और क्षमताओं को पहचानकर स्वयं को स्थापित किया है। हम स्वपथगामियों के लिए भी यह जरूरी है कि हम अपनी क्षमताओं को पहचानें।''
– भूपेन्द्र फतरोड (इन्दौर)

''गुरूकुला में म्हने या अेक घणी मोटी वात हमझ में आई के आपे जतरी न्यारी न्यारी जात रा रूखड़ा व्हावांगा वतरो हीज धरती माता रे वाते अर हवा पाणी रे वाते घणो हाऊ रेवे है अर ये सब रूखड़ा न्यारा न्यारा पण लारे अणा परे घणा न्यारा न्यारा जीव ई पनपे है अर धरती रो धारो आछी तरे घूमे हैं।''
– पन्नालाल पटेल (मेवाड़)

निरन्तर खोज के लिए प्रेरित करती है केरल-यात्रा

नये प्रयोग करने में खोज का बहुत महत्त्व है और खोज करने में यात्राओं का। ... और स्वपथगामी बनने के लिए इन सबका होना बहुत जरूरी है। अप्रैल में आयोजित केरल–यात्रा ऐसा ही अवसर था, जिसमें देश के विभिन्न कोनों में विकल्पों की खोज करने वाले 16 स्वपथगामियों ने भाग लिया।

इस यात्रा के दौरान उत्तरी केरल में स्थित 4 ऐसे समूहों (कनवू, गुरुकुला, कुम्भम् म्यूरल्स एवं ऑलेमेंट्स) से मिले, जो प्रकृति के साथ उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन जी रहे हैं और स्वराज के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं। ये तीनों स्थान विशेष प्रकार के लर्निंग सेंटर हैं, जहाँ बच्चों, युवाओं व परिवारों के साथ सीखने के प्रयोग एवं माहौल विकसित कर रहे हैं। यहाँ काम करने वाले सभी लोग स्वपथगामी हैं, जो अलग–अलग तरह से मुख्यधारा व्यवस्था को चुनौती देकर स्वयं सीखने की प्रक्रियाओं को पोषित कर रहे हैं। इनसे वे लोग प्रेरणा ले सकते हैं, जो नए विकल्प खोजना चाहते हैं। यात्रा के विस्तृत अनुभव पृष्ठ 2 व 3 दिए गए हैं।

यात्रा में मुझे महसूस हुआ कि हम आधुनिक साधनों की गुलामी से मुक्त होकर प्रकृति में ही खुद सृजन करके अपनी जरूरतें पूरी कर सकते हैं।
–पाण्डुरंग (नाशिक)

walking on...

पारम्परिक कला में सौन्दर्य-बोध

– किशन प्रजापत
<k_prajapat24@rediffmail.com>

स्वपथगामी–यात्रा, केरल के दौरान मुझे 'कुम्भम् म्यूरल' नामक जगह से बहुत प्रेरणा मिली। कुम्भम् म्यूरल के संस्थापक के. बी. जिनन ने एन आई डी, अहमदाबाद में यह महसूस किया कि वहाँ जो पढ़ाया जाता है, वह बहुत संकुचित है और केवल एक खास वर्ग के निर्माण के लिए है। एन आई डी की डिग्री के बावजूद उन्होंने ग्रामीण लोगों के साथ मिलकर प्रकृति और लोक ज्ञान से सीखने के लिए 'कुम्भम् म्यूरल्स' की शुरूआत की।

कुम्भम् म्यूरल नीलाम्बुर के निकट एक छोटे से गाँव में स्थित कुम्भकारों का समूह है। ये लोग अपनी पारम्परिक कुम्भकारी कला को कायम रखते हुए उसमें सृजनात्मक प्रयोग कर रहे हैं। जैसे वॉल–म्यूरल बनाना, चौकोर टाइल्स पर महीन कारीगरी करके फर्श पर लगाना, दैनिक उपयोग की चीजों को कलात्मक ढंग से बनाकर उन पर चित्रकारी करना। आधुनिक या मशीनी उत्पादों को चुनौती देकर अपनी इस कला को स्थापित करने और लोगों का ध्यान वास्तविक सौन्दर्य की ओर आकृष्ट करने के लिए इन्होंने अपना मार्केट भी तैयार किया है।

इनका मानना है कि वास्तविक सौन्दर्य प्राकृतिक एवं हस्तनिर्मित चीजों में है। जिनन कहते हैं कि आज विचारों एवं शब्दों का प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि हम अधिकांशतः किताबी या लिखित जानकारियों पर निर्भर हो गए हैं और हमने वास्तविक ज्ञान के अथाह स्त्रोत प्रकृति को बिल्कुल नकार दिया है। यही कारण है कि हम दिनों दिन प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं। वास्तव में कोरा किताबी ज्ञान हमारी आन्तरिक चेतना को मार देता है और हमें अनुभवजन्य ज्ञान से बिल्कुल अलग कर देता है। आज जरूरी है कि हम प्रकृति के साथ अपने रिश्तों को पुनः मजबूत करें, ताकि सच्चे सौन्दर्य और आनन्द को पहचान सकें, असली ज्ञान और सृजन का सुख प्राप्त कर सकें।

हमने यहाँ ज्ञानेन्द्रियों और प्रकृति के आपसी सम्बन्धों पर कार्यशाला आयोजित की, जिससे मुझे अपने जीवन और प्रकृति को समझने में मदद मिली। इस कार्यशाला में हमने खुले वातावरण में अलग–अलग तरह के संगीत को सुना, प्रकृति की विराट लीला और जीव–जन्तुओं की क्रीड़ाओं का बारीकी से अवलोकन किया, महसूस किया।

आज मैं व्यक्तिगत स्तर पर कोशिश करता हूँ कि स्वयं को प्रकृति की ओर उन्मुख कर सकूँ, प्रकृति के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझ सकूँ। कुम्भम् म्यूरल्स के बारे में अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क कीजिएः– Jinan KB, Kumbham Murals, Aruvacode Village, Nilambur, Kerala 679329 <jinankb@eth.net>

कनवू : नए सपने, नई राहें

– विनोद भट्ट<mrvinodbhatt@yahoo.co.in>

अपने सपने बुनने और उन्हें साकार करने का मंच है 'कनवू', जिसका हिन्दी अर्थ है – सपना। यह समूह किसी को सिखाने के बजाय साथ मिलकर सीखने की प्रक्रिया में विश्वास रखता है। श्री के. जे. बेबी द्वारा शुरू किया गया बच्चों, युवाओं और वयस्कों का यह संयुक्त समूह केरल के वायनाड़ जिले के चिंगोड नामक गाँव में स्थित है। ये कई चीजें जैसे आदिवासियों का लोकनृत्य, संगीत, नाटक, पारम्परिक खेती आदि स्थानीय लोगों के साथ मिलकर सीख रहे हैं।

आसपास के इलाकों से आये हुए लगभग 45 बच्चे और युवा यहीं पर रहते हुए प्रकृतिमय जीवन जी रहे हैं तथा स्वयं सीखने की प्रक्रिया को मिल–जुलकर आगे बढ़ा रहे हैं। ये अपनी बुनियादी जरूरतों की पूर्ति स्वयं द्वारा उत्पादित चीजों से करते हैं। यहाँ एक अनूठी लाइब्रेरी है, जिसमें स्थानीय बोली की पुस्तकें, वाद्ययन्त्र एवं विविध कलात्मक सामग्री उपलब्ध है। यहाँ पर स्कूल की तरह कोई शिक्षक नहीं है, बल्कि के. जे. बेबी और शरली जैसे दोस्त हैं। यहाँ पर सभी लोग एक परिवार की तरह रहते हैं, जहाँ वे एक–दूसरे के साथ अपनी प्रतिभाओं, अनुभवों और क्षमताओं को बाँटते हैं। ये लोग केरल में अलग–अलग जगहों पर अपनी कला (कालरिपेट्ट जैसी पारम्परिक कला, विभिन्न बोलियों के गीत एवं नृत्य) का प्रदर्शन करते हैं। चलित पुस्तकालय के माध्यम से आसपास के गाँवों में लोगों के साथ संवाद करते हैं तथा लोक कथाओं, नाटकों के जरिये सामुदायिक मीडिया को पुनः मजबूत करने का प्रयास करते हैं। उन्होंने कुछ फिल्में भी बनाई हैं जिनमें मलयालम भाषा में बनाई गई फिल्म 'गुडा' का निर्माण, निर्देशन और अभिनय सब बच्चों ने ही मिलकर किया है।

यहाँ के तमाम बच्चों और युवाओं के सीखने की प्रक्रियाएँ और जीवन के निर्णय उनके अपने हाथ में है। ये अपनी क्षमताओं, योग्यताओं और अपने आत्मविश्वास को प्रमाणित करने के लिए किसी प्रकार की डिग्री का सहारा नहीं लेते।

मेरी स्वयं की रुचि अपने स्थानीय संगीत और थिएटर में है, इसलिए कनवू मेरे लिए सीखने की बहुत महत्त्वपूर्ण जगह रही। मैंने भी बच्चों के साथ मिलकर गढ़वाली बोली के गीत गाए तथा केरल के स्थानीय गीत व नृत्य बच्चों से सीखे। कनवू उन सभी लोगों के लिये खुला है, जो नए प्रयोग करना चाहते हैं, नया सीखना चाहते हैं और अपने अनुभव बाँटना चाहते हैं। इनके साथ मिलकर सीखने या अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :– KJ Baby, Kanavu, Village Cheengodu, Taluka Sultan Battery, Wayanad District, Kerala <nannaru@rediffmail.com>, phone 04936-211114

जंगल और जीवन की पूरकता

– विनय फुटाणे <vinayfutane@rediffmail.com>

केरल में पेरिया नामक स्थान पर स्थित है – गुरुकुला वनस्पति उद्यान। यह उद्यान 8 एकड़ में फैला है, जहाँ लगभग 2000 प्रकार की वनस्पतियों का संवर्द्धन किया गया है। जंगल में जीवन को अलग ढंग से जीने और प्रकृति से सीखने के अद्‌भुत प्रयोगों को देखकर मैं मन्त्रमुग्ध हो गया।

लगभग 35 साल पहले यहाँ पर हरित क्रान्ति के नाम पर जंगल काटे गए और व्यापारिक खेती की शुरूआत की गई थी। उसके बाद से चाय, कॉफी, रबर आदि नकदी फसलें उगाई जाने लगीं। इससे पहाड़ों पर पानी रुकना बन्द हुआ, पानी सीधा नीचे की ओर बहने लगा, साथ–साथ मिट्‌टी भी बहने लगी। इस तरह वहाँ के जंगल साफ होने लगे।

ऐसी स्थिति से चिंतित होकर करीब 25 वर्ष पहले वुल्फगेंग (जर्मन–मूल के भारतीय) ने इस उद्यान की शुरुआत की और वनस्पतियों का संवर्द्धन शुरू किया। यह उद्यान बनाते समय उन्होंने हरेक वनस्पति से गहरा परिचय किया, उन्हें ज़िन्दा रखने के लिए अलग–अलग तरकीबें खोजीं, जो किसी पुस्तक में उपलब्ध नहीं होंगी। इसके लिए उन्हें किसी प्रकार की डिग्री या सर्टिफिकेट की कोई जरूरत नहीं पड़ी। ये सारे प्रयोग एवं तरीके उन्होंने स्वयं तथा स्थानीय लोगों के अनुभवों, प्रयोगों से खोजे हैं। इस कार्य–प्रक्रिया में उन्होंने सहज एवं प्राकृतिक जीवनशैली को अपनाया और यहाँ के पारम्परिक समुदायों के साथ अपना परिवार बसाया।

जब हम गुरुकुला में पहुँचे, तो मैं सारा परिसर देखकर आश्चर्यचकित हो गया। जहाँ नज़र घुमाएँ, वहाँ नये–नये वृक्ष, उन पर चढ़े हुए जीव, लताएँ और अन्य वनस्पतियाँ। यहाँ पर जमीन का पूर्ण उपयोग किया गया है। बड़े पेड़ों के नीचे छोटे पेड़, उनके नीचे छोटे पौधे और लताएँ, बची हुई जमीन पर शैवाल का गलीचा। हरेक को जीने देने की प्राकृतिक योजना है और सभी एक–दूसरे पर अवलम्बित है। इसका पूरा अभ्यास करके उद्यान को प्रकृति के नजदीक जाकर बढ़ाया गया है। अब यह उद्यान पुराने जंगल (जो पेड़ों की कटाई से पहले था) की प्रतिकृति ही लगता है।

यहाँ पर अलग–अलग जगहों से आए वॉलण्टीयर भी काम करते हैं, जो योग, ध्यान, शरीर–श्रम, ऑर्गेनिक खाद्यों एवं औषधीय पौधों आदि पर अध्ययन करते हैं तथा अपने अनुभवों को बाँटते हैं। ये लोग अपने इन प्रयासों से विनाशी विकास व व्यवस्था को चुनौती दे रहे हैं और वैकल्पिक एवं स्वावलम्बी जीवन जीने की कोशिश कर रहे हैं। एक किसान होने के नाते मुझे गुरुकुला से बहुत प्रेरणा मिली है। यह सीखने और नए प्रयोग करने के इच्छुक लोगों के लिए अनूठा अवसर है। आप निम्न पते पर सम्पर्क कर सकते हैं :– Wolfgang, Gurukula Botanical Sanctuary, Alattil P.O. North Wayanad, Kerala 670644 <gbsanctuary@vsnl.net> phone : 04935-260426

ओरिगामी का आनन्द स्कूल में कहाँ!

– मन्दार शरद वैद्य
<aapulkiindia@sancharnet.in>

मुझे यह अहसास हुआ कि अपनी इन्द्रियों, स्वविवेक और हृदय के सामंजस्यपूर्ण सहयोग से जो हम सीख सकते हैं, वो हम केवल सुनकर, रटकर या स्कूल जैसी बन्द जगह में कभी नहीं सीख सकते। तब मैंने अपनी रुचि को पहचानने और मनपसन्द चीजें सीखने में ध्यान देना शुरू किया। मैंने सीखने के लिए अपना मार्ग खुद चुनने का निर्णय लिया और मानसिक तौर पर स्कूली–प्रक्रियाओं से वॉकआउट हो गया, लेकिन मैंने औपचारिक तौर पर स्कूल नहीं छोड़ा था। मैं स्कूल में सिर्फ जाकर बैठता था, मन में कुछ और ही विचार चलते थे। मैं अपनी पारिवारिक स्थितियों से निरन्तर जूझते रहने के कारण बहुत संवेदनशील था और शिक्षकों का गुस्सा मुझे कतई पसन्द नहीं था। इसलिए मैं स्कूल से और अधिक दूर होता गया।

वॉकआउट होने के बाद मैं खुद को बहुत खुशनसीब समझता हूँ कि 'ओरिगामी' जैसी कला मैं सीख पाया, जो स्कूल में सीखना मुश्किल ही नहीं, बल्कि नामुमकिन था। यह कला मैंने एक तिब्बती आदमी से सीखी, जो फुटपाथ पर बैठकर स्वेटर बुनने का काम करता था। यह जापान की एक पुरातन कला है, जिसमें कागज को फोल्ड करके विविध प्रकार की कलात्मक आकृतियाँ बनाई जाती हैं। जैसे – दैनिक उपयोग की चीजों का निर्माण, मित्रों के लिए भेंट–वस्तु बनाना, खेल की सामग्री बनाना, कलात्मक सजावट की चीजें तैयार करना। आज अधिकांश लोग ओरिगामी को केवल पेपर–फोल्डिंग या बच्चों का मन बहलाने की कला के रूप में ही देखते हैं, लेकिन मैंने इसमें पेपर–कटिंग के भी कई प्रयोग किए हैं और इसका उपयोग कल्पनाशक्ति के विकास व नया सृजित करने में किया है। मुझे लगता है कि इस कला के नियमित अभ्यास से हम बहुत सारी नई एवं उपयोगी चीजों का निर्माण कर सकते हैं तथा हम अपनी ऊर्जा को रचनात्मकता में बदलकर संवेदनशील हो सकते हैं।

बच्चों में आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए मैं ओरिगामी की कार्यशालाएँ करता हूँ। जो बच्चे अपने भीतर डर महसूस करते हैं, अस्वस्थ महसूस करते हैं या कुछ कर पाने में स्वयं को अक्षम मानते हैं, उनमें निडरता, हौसला, मनः शान्ति और उत्साह को कायम रखने के लिए ओरिगामी बहुत मददगार है। ओरिगामी से मुझे जो समाधान एवं आनन्द मिलता है, उसकी तुलना पैसे से प्राप्त खुशी से नहीं की जा सकती। मेरा सपना है कि ज्यादा से ज्यादा लोग ओरिगामी सीखें और इसका आनन्द लें।

स्वयं-शिक्षण का एक अनुभव

– सुजाता बाबर <sujata@abhivyakti.org.in>

'कनवू' में करीब 45 बच्चे और युवा नई–नई चीजें सीखते हुए अपने जीवन को अलग ढंग से जीने के रास्ते खोज रहे हैं। इनमें से लीला के साथ बातचीत करने का मौका मिला, जो स्वयं एक स्वपथगामी है। उसमें बहुत आत्म–विश्वास है, उसके बहुत सपने हैं। कनवू में तैयार हुई फिल्म 'गुडा' में वह सहायक–निर्देशिका (असिस्टेंट डायरेक्टर) थी। प्रस्तुत है, लीला से हुई कुछ बातें :–

आप कनवू में कैसे आईं?

– दस साल पहले बे मामा (के. जे. बेबी, जिन्होंने कनवू की नींव रखी) अपने नाटक ग्रुप को लेकर गाँव में आए। मैं भी उसमें शामिल हो गई। उनके साथ खेल खेलते थे, कहानियाँ सुनते थे, मटके बनाते थे। उसके बाद हम साथ रहने लगे। बे मामा ने यह जगह खरीदी। पहले तो छोटे घर बनाए, बाद में बड़ी ईमारत और लायब्रेरी बनाई। हम बच्चों ने खुद अपने हाथों से इस ईमारत को बनाया है। यह पूरा करने में हमें एक साल लगा। इस दौरान हमें बहुत मजा आया। मैं तब दस साल की थी, अब बीस की हूँ।

आपके स्कूल के क्या अनुभव हैं?

– मैं एक महीना स्कूल में गई। मुझे वहाँ अच्छा नहीं लगा। मेरे साथी बच्चे उनके स्कूल के अनुभव बताते हैं, तो मुझे अच्छा नहीं लगता। हम स्कूल में जाते हैं, तो वहाँ हमें नाम पूछते हैं और हमारे नाम उनको पसन्द नहीं आते, अजीब लगते हैं और वे लोग हमारे नाम बदल देते हैं। हमारी भाषा अध्यापकों से अलग है। वे हमारी भाषा पर हँसते हैं, मजाक उड़ाते हैं। हमें यह बुरा लगता है, डर भी लगता है। वे लोग मानते हैं कि हम होशियार नहीं हैं, हममें बुद्धि नहीं है, दिमाग नहीं है! इसलिए स्कूल बिल्कुल अच्छा नहीं लगता।

आपको यहाँ कैसा महसूस होता है और यहाँ क्या-क्या सीखते हैं?

– यहाँ मुझे बहुत अच्छा लगता है, मैं यहाँ सब सीख सकती हूँ। हम सब यहाँ समूह में होते हैं, कोई क्लासेज नहीं होती। समूह के साथ जंगल में जाते हैं, पंछियों को देखते हैं, उनके बारे में, तितलियों के बारे में सीखते हैं। कहानियाँ, गाने सीखते हैं, अभ्यास करते हैं। रोज हम सब शाम को मिलते हैं, नाचते हैं, गाते हैं। उसके बाद अपने मन से कुछ पुस्तकें पढ़ते हैं। साथ ही हम पुस्तकीय जानकारियाँ भी लेते हैं, किन्तु स्कूल की तरह नहीं। जैसे हम अपनी जगह का इतिहास पहले सीखते हैं, अपने इलाके की कहानियाँ जानने का प्रयत्न करते हैं। हमारे यहाँ का भी एक इतिहास है, कहानियाँ हैं। हम संगीत सीखते हैं, वाद्ययन्त्रों (तबला, हारमोनियम आदि) का अभ्यास करते हैं। सब साथ में करते हैं, साथ में सीखते हैं।

हमारी अपनी भाषा है, नृत्य है, नाटक है, पहनावा है, गाने हैं। मैं ये सब जानती हूँ। हमारे यहाँ दो तरह के आदिवासी हैं – पणिया और नायीका (मैं पणिया आदिवासी हूँ)। कनवू में हम दोनों साथ रहते हैं। घर में हम एक–दूसरे से बात नहीं करते। आपस में शादी नहीं करते। लेकिन कनवू में हम दस सालों से इकट्ठे रहते हैं। हमारी भाषा अलग–अलग हैं, पर हम सब एक–दूसरे की भाषा जानते हैं। यहाँ आसपास के बुजुर्ग लोग आते हैं, कहानियाँ, दन्त कथाएँ सुनाते हैं। उन्हें कनवू अच्छा लगता है।

यहाँ आपकी खासकर किन चीजों में रुचि है? भविष्य में आप क्या करना चाहेंगी?

– मुझे नाचना, खेलना और तबला बजाना अच्छा लगता है। मुझे यहाँ के लोगों का इतिहास और संस्कृति जानने में बहुत रुचि है। मैं केरल और देश के अलग–अलग स्थानों में घूमना चाहती हूँ। अलग–अलग लोगों से मिलना, उनकी संस्कृति और जीवन के बारे में जानना चाहती हूँ। मैं कनवू में भी रहना चाहती हूँ और हमारे जैसे और बच्चों के लिए कनवू जैसी ही और जगह बनाना चाहती हूँ।

बनी-बनाई दुनिया

बस! अब और जहर नहीं!

– शिल्पा जैन <shilpa@swaraj.org>

आज से चार साल पहले मैंने एलोपेथिक दवाइयाँ लेना छोड़ दिया। इससे पहले कभी मैंने खुद को इतना स्वस्थ महसूस नहीं किया, जितना आज! . .. बिना किसी दवा के!

पहले जब भी मैं बीमार पड़ती, तो बीमारी के मूल कारणों को पहचानने की कोशिश नहीं करती थी। मैं अकसर अपनी लापरवाही से बीमार होती थी। पर्याप्त नींद नहीं लेना, ठीक से भोजन नहीं करना, पर्याप्त मात्रा में पानी नहीं पीना, अत्यधिक मानसिक तनाव आदि कारण मेरे अपने हाथों में थे। अपनी जीवन–शैली को बदलने के बजाय; तत्काल राहत पाने के लिए मैं अकसर गोली (pill) ले लेती।

मेरी दवाइयों पर निर्भरता वाली बात ठीक वैसी ही है, जैसी गाँधीजी ने 'हिन्द स्वराज' में डॉक्टरों और अस्पतालों पर आलोचनात्मक टिप्पणी करते हुए लिखी है। दवाइयाँ एक प्रकार का खतरनाक जाल है, जो लोगों को असंयमित एवं अनियमित तरीके से जीवन जीने की छूट देती है। हमारे स्वास्थ्य और चिकित्सा के बहाने डॉक्टर बेशुमार पैसा कमाते हैं। डॉक्टरों के पास जाने के बजाय अगर हम अपने आप को देखें, अपनी आदतों और जीवनचर्या को बदल लें, तो एलोपेथिक दवाइयों का व्यवसाय कैसे चलेगा? डॉक्टरों और अस्पतालों को कौन पूछेगा?

वास्तव में, यदि हम स्व–चिकित्सा में विश्वास करते हैं या संयमित जीवन जीते हैं, तो वर्तमान विकास (विनाश) एवं प्रगति (दुर्गति) का ढाँचा कैसे कायम रहेगा? क्योंकि आज हम हवा और पानी की शुद्धता का ध्यान रखने के बजाय, दवा का सेवन करते हैं! शारीरिक श्रम और नियमित व्यायाम करने के बजाय, दवाई लेना पसन्द करते हैं! हमारे भोजन में मिले जहर (रासायनिक खेती से प्राप्त अनाज में जहर ही होता है) का प्रतिरोध करने के बजाय, दवाई से काम चलाते हैं!

जब मैंने एलोपेथिक दवा को बन्द करके अपने स्वास्थ्य की जिम्मेदारी अपने हाथ में ली, तो स्वयं को नजदीक से जानना आरम्भ किया। एलोपेथिक दवा के विकल्प के रूप में मैंने किसी अन्य दवा (होम्योपेथिक, बायोकेमिक...) का उपयोग शुरू नहीं किया, बल्कि अपनी जीवनचर्या को बदलने पर ध्यान दिया। मैं उन तरीकों पर ध्यान देने लगी, जिनसे मैं अपनी जीवन को अधिक सन्तुलित और खूबसूरत बना सकती हूँ। खेलने व श्रम करने के लिए समय निकालना; देशी एवं सन्तुलित भोजन व पेय का इस्तेमाल करना; अपने शरीर, इसकी ताकतों और सीमाओं के प्रति अधिक जागरुक होना; अपनी दादी से प्राकृतिक औषधियों के बारे में सीखना आदि आज मेरे जीवन का हिस्सा बन गए हैं।

स्कूल का ढोंग

''हरित क्रान्ति देश की कृषि के लिए वरदान है! (?)''

– गोपाल शर्मा <gopalpandit108@yahoo.com>

जब मैं कक्षा तीन में था तब स्कूल में एक गीत शुरू हुआ, ''हाँ रे धरती जागी रे...।'' इसका आशय था कि आजादी के बाद देश का 'विकास' हो रहा है और किसानों व मजदूरों की हालत में सुधार हो रहा है। नदियों पर बड़े–बड़े बाँध बन रहे हैं, जिनसे सिंचाई के लिए पर्याप्त पानी मिल रहा है; बिजली का उत्पादन हो रहा है।

हमें पढ़ाया गया कि हमारा देश (खासकर ग्रामीण क्षेत्र), यूरोपीय एवं अमेरिकन देशों की तुलना में कम विकसित हैं। अमेरिका की एक एकड़ जमीन भारतीय मुद्रा में 3 लाख रुपये सालाना कमाई देती है, जबकि भारतीय उपजाऊ जमीन मुश्किल से 30–35 हजार रुपये सालाना आय दे पाती है। पश्चिमी देशों के पास अधिक उपज प्राप्त करने के लिए वैज्ञानिक तकनीक के साथ–साथ पर्याप्त मात्रा में रासायनिक खाद, हाईब्रिड बीज व कीटनाशक उपलब्ध है।

मेरा परिवार खेती से जुड़ा है, अतः खेती के पाठ को मैं ग़ौर से पढ़ता था। लेकिन मेरे अनुभव किताबी जानकारी से बिल्कुल अलग थे। क्योंकि हम जब भी रासायनिक खाद का उपयोग करते तो उसके बुरे प्रभाव जरूर होते थे। जैसे मेरे घर के सभी सदस्यों के बाल सफेद होने लगे, कमजोरी बढ़ने लगी। नित नई बीमारियाँ होने लगी। मेरे घर वाटर–इंजन है, इसलिए तकनीकी के फायदे–नुकसान भी मैं जानता था। उसके रख–रखाव के सालभर के खर्चे में तो दो नये बैल खरीदे जा सकते हैं। इंजन या मोटर से पानी का बहुत दोहन होता है और कुएँ–बावड़ियों का जल स्तर गिर जाता हैं। इसके बजाय अगर रहँट या चड़स का प्रयोग करें तो जल–स्तर समान बना रहता है।

अब मुझे समझ आया कि हरित क्रान्ति के नाम पर हम किसानों को भी उपभोग एवं प्रतिस्पर्धा में धकेला जा रहा है। उत्पादन बढ़ाने की होड़ में हाईब्रिड बीजों का इस्तेमाल कर रहे हैं और यदि हाईब्रिड बीजों का प्रयोग होगा, तो रासायनिक खाद और कीटनाशकों की जरूरत होगी। उससे कई बीमारियाँ पैदा होंगी और जमीन बंजर होगी। फिर उस फसल को पानी भी ज्यादा चाहिए, तो मोटरपम्प या डीजलपम्प पर निर्भर रहना पड़ेगा। जुताई के लिए बैल–हल के बजाय ट्रैक्टर भी काम में लाना पड़ेगा। इस प्रकार हमें बाजार व सरकार पर निर्भर रहना ही पड़ेगा। इन्हीं लोगों से ऋण लेना और ऋण लेकर उसकी भरपाई के लिये अन्य लोगों और प्रकृति का शोषण भी करना ही पडेगा।

इस झूठ को पहचानने के बाद मैंने लोगों के साथ इस विषय पर बातचीत और व्यवस्था पर प्रश्न उठाने शुरू किए। मैं उदयपुर में कुछ परिवारों के साथ छत और बगीचों में देशी खेती के प्रयोग कर रहा हूँ। इसके साथ ही 'धरती रे संग' पत्रिका के माध्यम से लोगों से निरन्तर संवाद करता हूँ और रासायनिक खेती को चुनौती देकर जैविक खेती से लगातार सीख रहा हूँ।

स्कूल में समय नहीं गँवाया

''जिनको प्रेम, विश्वास, स्नेह, मैत्री, खुशी चाहिए, परस्परता, पूरकता, सहयोग चाहिए, उनको इस व्यवस्था से, उसमें भी पहले इस शिक्षा के नाम पर लुटेरे बनाने वाली व्यवस्था से वॉक–आउट करना ही होगा व उसके बाद खोजना होगा कि हमारी आवश्यकता क्या? हमारा प्रयोजन क्या? व उसकी पूर्ति कैसे होगी? जिसमें से नई शिक्षा, नया जीवन, नया समाज, नई दुनिया की रचना होगी। जो हम चाहते हैं, वही हम पाएँगे और जीवन सुखमय बनेगा।''

– सत्यप्रकाश भारत

बचपन से ही अपनी रुचि, जिज्ञासा और करके सीखने की प्रवृत्ति को कायम रखते हुए कान्हा (19 वर्ष) ने खुद को कभी औपचारिक स्कूल के हवाले नहीं किया। यह स्वयं एक स्वपथगामी हैं, जिसने वादन, गायन, अभिनय, कठपुतली बनाना व चलाना आदि स्वयं सीखे हैं। प्रस्तुत है, इनके कुछ अनुभव इन्हीं के शब्दों में :–

जब मैं बहुत छोटा था, अपने पशुओं को लेकर खेत व जंगल में जाता था। पशुओं को चराते हुए, दूसरे ग्वालों के साथ खेलते हुए, नाचते–गाते हुए मेरी रुचि संगीत में बढ़ने लगी। हम अपनी बोली (मारवाड़ी) में गीत गाते, जानवरों की बोली सीखते और उनकी आवाजें निकालने का अभ्यास करते। मेरा परिवार पारम्परिक संगीत से जुड़ा रहा है, इसलिए वाद्ययन्त्र बजाने भी मैंने सीखे।

मैंने कभी स्कूल जाने की इच्छा नहीं जताई और न ही मेरे माता–पिता ने स्कूल भेजना जरूरी समझा। हाँ, मेरे गाँव में एक रात्रिशाला थी, उसमें जाकर मैंने पढ़ना–लिखना भी सीख लिया। मैं अपने स्कूल जाने वाले दोस्तों को देखता हूँ, वे पढ़ने और लिखने के अलावा कुछ खास नहीं कर सकते। ... और उनके बराबर पढ़ना और लिखना तो मैं भी जानता हूँ। वे सब तो फिर भी टीपकर (किताब से नकल करके) लिखते हैं, मैं तो जो भी लिखता हूँ, अपने मन से लिखता हूँ। जब मैं ये सब खुद ही कर लेता हूँ, तो क्या जरूरत है स्कूल में समय खराब करने की! ... और स्कूल में रहकर तो मैं गाना, बजाना, नाटक करना, पपेट बनाना व चलाना ये सब नहीं सीख सकता था।

मेरी रुचि (अब तो आदत ही बन गई) है कि मैं घर में, गाँव में किसी भी चीज को उठाकर, खोलकर, जोड़कर छेड़छाड़ करता रहता हूँ, ये छेड़छाड़ स्कूल में तो नहीं करने देते। मेरे स्कूल वाले दोस्त आपस में ही झगड़ते रहते हैं, लेकिन मेरा तो सैंकड़ों लोगों के साथ रिश्ता है। मैं हर उम्र के लोगों के साथ मिलता हूँ, नाटकों के माध्यम से अपनी बात कहता हूँ और सबसे सीखता हूँ। स्कूल वालों को तो किताबों से ही फुरसत नहीं है। मैं अपने घर, कमरे में पड़ी बेकार चीजों का उपयोग करता हूँ, उनसे नई उपयोगी चीजें बनाता हूँ। छोटी–छोटी इलेक्ट्रॉनिक चीजों (रेडियो, टेपरिकॉर्डर, टॉर्च आदि) को भी ठीक कर लेता हूँ। इसके लिए मैंने कहीं से कोई कोर्स नहीं किया है।

अभी मैं एस. डब्ल्यू. आर. सी. तिलोनिया (मेरे गाँव के निकट स्थित ग़ैर–सरकारी संस्था) में संचार टीम के साथ जुड़कर काम कर रहा हूँ। मेरा खास काम वाद्ययन्त्र बजाना (ढोलक, ढोल, नगाड़े, बॉसुरी, मजीरे), गाना, नुक्कड़ नाटक बनाना और प्रदर्शित करना, कागज की लुग्दी से पपेट बनाना और पपेट शो करना आदि है। मैं अभी कुछ और वाद्ययन्त्र (हारमोनियम, करताल) बजाना सीख रहा हूँ। ये सब मैं खुद करके सीखता हूँ और टीम के सब साथी मेरी मदद करते हैं।

सम्पर्क :– कानाराम,
संचार टीम,
एस. डब्ल्यू. आर. सी. तिलोनिया
जिला अजमेर – 305816
(राजस्थान)

कला को गहराई से जानने का प्रयास

– ज्योति राय <jyoti_victoria@yahoo.com>

दिल्ली की भीड़ भरी दुनिया से निकलकर मैं एक महीने के लिए उदयपुर गई। इस एक महीने के दौरान मैंने शिक्षान्तर और 'आइए, उदयपुर से सीखें' प्रक्रिया से जुड़े लोगों के साथ रिश्ते बनाए और जीवन से जुड़ी कई बातों पर समझ बनाई।

मेरी चित्रकला में रुचि थी, पर कला के बारे में गहरी समझ नहीं थी। कला को गहराई से जानने–समझने के लिए मैं यहाँ के कलाकारों से मिली। किरण मुर्ड़िया, शर्मिला राठौड़, भूपेश कावड़िया, शाहिद परवेज, पी. एन. चोयल आदि कलाकारों से मैंने चीजों के अवलोकन और विविध रंगों से भावनाओं के चित्रांकन के बारे में सीखा। मैंने सीखा कि कलाकार को (चाहे वह संगीत, नृत्य, चित्रकला किसी भी कला से जुड़ा हो) अपने काम में सम्पूर्ण समर्पण की जरूरत होती है, तभी उसे संतोष मिलता है। इनसे प्रेरणा लेकर मैंने स्वयं में विनम्रता और संवेदनशीलता विकसित की, कला को व्यापक नजरिये से देखना शुरू किया और अपनी कला को विकसित किया।

पुस्तक समीक्षा

डेंजर : स्कूल!

– रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>

डेंजर : स्कूल! जी हाँ! स्कूल बहुत बड़ा ख़तरा है – सारी दुनिया के लिए! 'डेंजर : स्कूल' ऐसी ही पुस्तक है, जो स्कूली व्यवस्था के षड्यन्त्र का पर्दाफाश करती है। इसमें स्कूली–व्यवस्था की शुरूआत से लेकर अबतक के घातक प्रभावों को पुस्तक में कार्टून–चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। साथ ही संस्थागत ढाँचों और आधुनिक औद्योगिक दुनिया पर भी करारा व्यंग्य किया गया है।

स्कूल को एक फैक्ट्री के रूप में दिखाया गया है, जिसमें बच्चों को नाजुक एवं रजिस्टर्ड पार्सल की तरह जमा किया जाता है और अन्त में ऐसे उत्पादों के रूप में बाहर निकाला जाता है, जो अनुशासित, आज्ञाकारी और बिना सोचे किसी भी आदेश का पालन करने लायक होते हैं। बच्चों को सिखाया जाता है कि वे चुपचाप बैठें। यहाँ केवल शिक्षक बोलता है, जानता है, आदेश देता है, फैसला करता है और सज़ा देता है। स्कूली–दुनिया की अपनी अलग भाषा है, जो बच्चों की भाषा से मेल नहीं खाती। यहाँ केवल वही स्वीकार किया जाता है, जो पाठ्यपुस्तक एवं शिक्षक के अनुसार मान्य है। बच्चों को अलग–अलग वर्गों में विभाजित किया जाता है और उनके बीच प्रतिस्पर्धात्मक माहौल तैयार किया जाता है। बच्चों पर ऐसे विषय थोपे जाते हैं, जिनका जीवन में कोई उपयोग नहीं है।

यह उन लोगों के लिए झकझोरने वाली पुस्तक है, जो स्कूली–व्यवस्था में ही रहकर बदलाव की आशा रखते हैं। इस पुस्तक से प्रेरित होकर मैंने अपने अनुभवों का विश्लेषण किया है। बच्चों, अभिभावकों और शिक्षकों के साथ हुई चर्चाओं का पुनरावलोकन किया है। इससे पूर्व मैंने 5 साल तक अनौपचारिक पाठशालाओं के साथ काम किया है। किन्तु आज मैं अपने माथे से शिक्षक और प्रशिक्षक का लेबल उतार चुका हूँ। स्कूल, अनौपचारिक पाठशालाओं और स्कूली दायरे से बाहर विविध कार्यशालाओं में अपने अनुभवों के आधार पर मैं भी एक 'कार्टून–पुस्तिका' तैयार कर रहा हूँ, ताकिं अपने स्कूली–जीवन की कड़वी सच्चाइयों को उजागर कर सकूँ और स्वयं सीखने के मौकों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित कर सकूँ।

'डेंजर : स्कूल ' पुस्तक का मूल संस्करण जिनेवा (स्विट्जरलैण्ड) स्थित 'आइडेक' नामक संस्था द्वारा प्रकाशित किया गया था। 1991 व 1996 में प्रकाशित संस्करण निम्न पतों पर उपलब्ध है:–

अंग्रेजी संस्करण *:– प्रकाशक : अदर इंडिया प्रेस, मापुसा क्लिनिक के पास, मापुसा, गोवा (मूल्य : 60 रुपये, पृष्ठ 100)*

हिन्दी संस्करण *:– सम्पादक : अरविन्द गुप्ता, प्रकाशक : भारत ज्ञान विज्ञान समिति, पश्चिम ब्लॉक 2, विंग 6, आर के पुरम, सेक्टर 1, नई दिल्ली –66 (मूल्य : 20 रुपये, पृष्ठ 77)*

पहल

थोपी हुई व्यवस्था से मुक्ति की आकांक्षा में जीवन की राह खुद बनाने वाले स्वपथगामियों के एक समूह की शुरूआत इन्दौर के चार स्वपथगामियों – गायत्री, सुरेन्द्र, भूपेन्द्र और अमित ने की है। यह संस्थाओं की औपचारिकता और संगठनों की जड़ता से मुक्त, खुला, प्रगतिशील और जीवन्त समूह है। यह मूलतः ग्रामीण युवाओं और बच्चों के साथ काम कर रहा है।

पहल समूह द्वारा चलाई जा रही गतिविधियों के प्रमुख लक्ष्य हैं कि – हम स्थानीय स्तर पर सीखने की खुली प्रक्रियाओं से जुड़ें और उन्हें मजबूत करें। ग्रामीण स्वपथगामियों को उनके भीतर विद्यमान कला और क्षमताओं को अभिव्यक्त करने का अवसर दें और हम बनी–बनाई व्यवस्था के प्रति स्थानीय स्तर पर रचनात्मक प्रतिरोध खड़ा करें। लर्निंग एक्सचेंज, कबाड़ से जुगाड़, अपना मंच, इन तीनों के माध्यम से पहल समूह यह कोशिश कर रहा है।

लर्निंग एक्सचेंज ग्रामीण स्वपथगामियों को उन अनुभवी और विविध क्षेत्रों में कार्यरत सज्जनों से जोड़ता है, जो उनके साथ अपना समय, कौशल और अनुभवों को बाँटने के लिए तैयार हों। इसके माध्यम से इन्दौर के आस–पास के कुछ युवा जैविक खाद बनाना, गाड़ियों की मरम्मत करना, स्क्रीन प्रिंटिंग, सिलाई जैसे कामों के अनुभव ले रहे हैं। कुछ युवा किसानों ने अपने खेतों के लिए स्वयं खाद बनाना आरम्भ करके स्वावलम्बन की ओर कदम बढ़ाए हैं। इसमें भी पहल समूह सहयोग–समर्थन प्रदान कर रहा है। इसके साथ हम **कबाड़ से जुगाड़**, अर्थात् बेकार मानी जाने वाली वस्तुओं से उपयोग लायक चीजें बनाने का भी काम कर रहे हैं। इससे कचरे की अवधारणा पर प्रश्न चिह्न लग रहा है। इससे मितव्ययिता तो बढ़ती ही है, साथ में कल्पनाशीलता और सृजनात्मकता का भी विकास हो रहा है तथा यह अभिव्यक्ति का अलग ढंग का माध्यम है। **अपना मंच** स्वपथगामी कलाकारों का मंच है, जिसके माध्यम से वे गायन, वादन और अभिनय क्षमता निखारते–सँवारते हैं और उसे प्रदर्शित भी करते हैं। इससे हम भक्ति व लोकगीतों, लोककथाओं से भी जुड़ रहे हैं।

पहल एक नया समूह है, अतः आपके अनुभवों और सुझावों की आवश्यकता है, जिससे हम सीख सकें और आगे बढ़ सकें। इसके लिए पहल समूह आपको सहर्ष आमन्त्रित करता है कि आप इन्दौर हमारे साथ कुछ वक्त बिताएँ।

सम्पर्क करें :–
अमित, 896/9, नन्दा नगर, इन्दौर – 452 011
ई–मेल : <pahal_g@rediffmail.com>

कुछ अवसर

ज्ञान प्रवाह

'ज्ञान प्रवाह' वाराणसी में स्थित सांस्कृतिक अध्ययन का केन्द्र है। प्रतिवर्ष यहाँ पर वैदिक एवं प्राचीन भारतीय संस्कृति से जुड़े विभिन्न विषयों एवं मुद्दों पर विविध कार्यशालाएँ, सेमिनार, कोर्स, नाटक, चर्चा–गोष्ठियाँ आदि आयोजित किए जाते हैं। उदाहरण के लिए : कालिदास, मूर्तिकला, चित्रकला एवं वास्तुकला, आर्कियोलॉजी, उपनिषद् आदि विषयों पर। भारतीय युवाओं के लिए प्रति–कोर्स सहयोग राशि 100/– रुपये रखी गई है।

इच्छुक साथी सम्पर्क करें :–
मैनेजिंग ट्रस्टी/माननीय निदेशक, ज्ञान प्रवाह सांस्कृतिक अध्ययन केन्द्र, दक्षिणी सामने घाट, वाराणसी (उप्र) 221 005
फोन : 0542–2366326
<jpvns@satyam.net.in>
www.jnanapravaha.org

स्वराज कोर्स

समाज में सकारात्मक बदलाव चाहने वाले युवाओं के लिये अगस्त व सितम्बर माह के चार सप्ताहांत में **स्वराज कोर्स** आयोजित किया जा रहा है। अगर हम स्वाधीनता, आज़ादी, लोकतन्त्र आदि के सही अर्थ को जानना चाहते हैं तो हमें सबसे पहले खुद को समझना होगा। इसके लिये गांधीजी ने एक रास्ता सुझाया – स्वराज। इस कोर्स का मकसद है कि लोग 'हिन्द स्वराज' (गाँधीजी द्वारा लिखित पुस्तक) को गहराई से समझें। इसके लिये वे युवा आवेदन कर सकते हैं जो समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को गम्भीरता से लेते हैं और आगे आकर कुछ कदम भी उठाना चाहते हैं। किन्तु उनका चेन्नई या इसके आसपास के इलाके का होना आवश्यक हैं, क्योंकि कोर्स अंग्रेजी और तमिल भाषा में होगा। इस कोर्स के लिये 2000 रू. फीस रखी गई है।

इच्छुक साथी स्कॉलरशिप के लिए भी आवेदन कर सकते हैं। अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें:–
Priya, Deputy, SAMANVAYA
Door # 28, 1st street, Bank colony, Madhavram, Chennai - 600 051, phone 044 - 25550781
priya@samanvaya.com

बीज विद्यापीठ

बीज विद्यापीठ (देहरादून, उत्तरांचल) में दिनांक 1–7 सितम्बर 2004 को ''समृद्धि की सही अवधारणा पर आधारित नई दुनिया का निर्माण'' विषयक एक कोर्स का आयोजन किया जा रहा है। इनका मानना है कि गरीबी को खत्म करने के लिये हमें अमीरी पर नियन्त्रण करना बहुत जरूरी है। समृद्धि की प्रचलित धारणा को कैसे बदला जाए कि हरेक को उसमें अपनी भागीदारी निभाने का मौका मिले? इसके अन्तर्गत समृद्धि की अवधारणा पर समीक्षात्मक समझ बनाने और समानता व आर्थिक पक्ष के बीच अन्तर्सम्बन्ध को गहराई से समझने का प्रयास किया जाएगा।

इस कार्यक्रम का संयोजन जर्मनी के वुल्फगेंग और भारत की वन्दना शिवा कर रहे हैं। अधिक जानकारी के लिये आप इनसे सम्पर्क कर सकते हैं :–
रुचिका, समन्वयक, बीज विद्यापीठ
ए–6 हौज खास, नई दिल्ली –16
फोन : 011–26968077, 26561868
<bijavidyapeeth@vsnl.net>
www.bijavidyapeeth.org

आमन्त्रण

आज हमारे सामने यह बहुत बड़ी चुनौती है कि हम इस बनी–बनाई दुनिया में अपनी पहचान और अपने तरीके से जीवन जीने की आजादी को कैसे कायम रखें? अमानवीय व्यवस्था के चक्रव्यूह को तोड़कर अलग–अलग विकल्प कैसे बनाएँ? आज यह जरूरी हो गया है कि हम अपनी क्षमताओं को पहचानकर सृजनात्मक जीवन जीने की शुरूआत करें, जिसमें हम आपसी विश्वास एवं अन्तर्निर्भरता की नींव पर आधारित स्वराज हासिल कर सकें। इसके लिए हर व्यक्ति को अपने सीखने की प्रक्रिया को अपने हाथ में लेना पड़ेगा।

यह पत्रिका शोषणमुक्त जीवन जीने और अपने रास्ते खुद बनाने वाले स्वपथगामियों द्वारा शुरू किया गया एक प्रयास है। अलग–अलग समुदायों, समूहों और व्यक्तियों के साथ संवाद स्थापित करने की यह एक कोशिश है, जिसके माध्यम से हम न केवल अपने अनुभवों का आदान–प्रदान करेंगे, बल्कि ऐसे लोगों, संस्थानों और स्थानों से भी रू–ब–रू होंगे, जो हमारे सीखने के सन्दर्भ बन सकते हैं। स्वपथगामी का यह अंक मुख्यतः केरल–यात्रा के अनुभवों पर आधारित है। केरल में जिन नए अवसरों का उल्लेख किया गया है, उनके बारे में विस्तृत जानकारी के लिए आप उनसे सीधा सम्पर्क कर सकते हैं और उनके साथ मिलकर सीखने एवं काम करने के बारे में बातचीत कर सकते हैं।

हम उन सभी लोगों को आमन्त्रित करते हैं, जो अपने जीवन में नए–नए प्रयोग कर रहे हैं और साथ मिलकर सीखने के मौके बना रहे हैं। **'बनी-बनाई दुनिया'**, **'स्कूल का एक झूठ'** और **'कुछ अवसर'** कॉलम के लिए विशेष आग्रह है कि आप भी अपने जीवन में इन चीजों को पहचानें और अपने अनुभव हमारे साथ बाँटें। साथ ही हम उन लोगों को भी आमन्त्रित करते हैं, जो इस पत्रिका के सम्पादन में सहयोग करना चाहते हैं।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :–
रामावतार सिंह <ramawtarsingh@yahoo.co.in>
अमित <indore_amit@rediffmail.com>
C/O शिक्षान्तर, 21 फतेहपुरा, उदयपुर – 04 (राजस्थान)
फोन – 0294–2451303